ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

"परिवर्तन कविता का कथ्य"

परिवर्तन सुमित्रानंदन पंत की लंबी कविता है जो 1926 में प्रकाशित कविता–संग्रह पल्लव में संकलित है। परिवर्तन एक ऐसी लंबी कविता है जिसमें सुमित्रानंदन पंत छायावादी से प्रगतिवादी में परिवर्तित हो रहे थे। इस कविता में प्रकृति के कोमल और कठोर चित्रों के साथ भाग्यवाद और निराशावाद के स्वर भी प्रस्फुटित हुए हैं। इस कविता का वैशिष्ट्य और महत्व सभी विद्वानों ने एक स्वर से स्वीकार किया है। शक्तिप्रिय द्विवेदी ने इस कविता के संबंध में यह कहा– ''उसमें परिवर्तनमय विश्व की करुण अभिव्यक्ति इतनी वेदनाशील हो उठी है कि वह सहज ही सभी ह्रदयों को अपनी सहानुभूति के कृ पासूत्र में बाँध लनेा चाहती हो।''1 इस कविता की प्रासंगिकता के विषय में डॉक्टर नगेंद्र लिखते हैं कि ''वास्तव में पंतजी ने न तो इससे पूर्व ही और न इसके बाद ही इतनी आवेशपूर्ण कविता लिखी है। 'परिवर्तन' पंत के काव्यकाश मंे उस दूरवर्ती तारे के सदृश है जो सबसे पृथक रहकर अपनी ज्योति विकीर्ण करता है– लाइक ए स्टार दैट् डवैल्स अपार्ट।''[2] 'परिवर्तन' के विषय में आचार्य रामचंद्र शुक्ल की मान्यता ह–ै ''पल्लव' के अंत में पंत जी जगत के विषम परिवर्तन के नाना दृश्य सामने लाए हैं। इसकी प्रेरणा शायद उनके व्यक्तिगत जीवन की किसी विषम स्थिति ने की है। जगत की परिवर्तनशीलता मनुष्य जाति को चिरकाल से क्षुब्ध करती है आ रही है परिवर्तन संसार का नियम है। यह बात स्वतः सिद्ध होने पर भी सह्रदयों और कवियों का मर्म स्पर्श करती रही है और करती रहेगी, क्योंकि इसका संबंध जीवन के नित्य स्वरूप मंे है। जीवन के व्यापक क्षेत्र में प्रवेश के कारण कवि कल्पना को कोमल, कठोर, मधुर, कटु भयंकर कई प्रकार की भूमियों पर बहुत दूर तक एक सम्बद्ध धारा के रूप में चलना पड़ा है।''[3]

'परिवर्तन' के कथ्य में एक विशिष्ट क्रम दिखाई पड़ता है। कम से कम छह खंडों में यह विभाजित है। कविता का आरंभ समृद्ध सांस्कृतिक अतीत से होता है। सुख–वैभव से युक्त वह पुरातन काल अब दिखाई नहीं देता। सृष्टि में सर्वत्र ज्ञान का प्रकाश था, चतुर्दिक ऐश्वर्य था, प्रचुर सौंदर्य था, जीवन शुद्ध सहज और प्राकृतिक था। अब उस सुवर्ण काल की बातें मिथ्या हैं। नश्वर जगत में परिवर्तन का चक्र प्रवाहित है। अब बसंत, पतझर में बदल जाता है, प्रातः काल की लाली सन्ध्या की आग में बदल जाती है, यौवन हड्डियों के कंकाल में बदल जाता है, व्याल जैसे काले केश, कांस और सिवार जैसे हो जाते हैं–

''आज बचपन का कोमल गात, जरा का पीला पात।
''गूँजते हैं सबके दिन चार, सभी फिर हाहाकार।''[4]

इस परिवर्तन के कारण ही बचपन बृद्धावस्था में, मुस्कुराहट रुदन में, संजोग वियोग में बदल जा?ता है। संसार की नश्वरता को देखकर पवन भी शून्य में ठण्डी साँसे भरता है,

Copyright ⓒ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

ओस के रूप में आँसू बहाता है, समुद्र का मन सिसक उठता है, तारे सिहर उठते है। कवि कहते हैं–

''अहे निष्ठुर पविवर्तन! तुम्हारा ही तांडव नर्तन
विश्व का करूण विवर्तन।''[5]

कविता के दूसरे और तीसरे खण्ड में, विनाश का रूप, संसार की नश्वरता और सतत् परिवर्तनशीलता पर विचार किया गया है। परिवर्तन विश्वविजेता है। इसके आक्रमण से नगर उजड़ जाते हैं। वैभव के प्रतीक महल खण्डहर हो जाते है। शारीरिक व मानसिक रोगों में वृद्धि हो जाती है। बाढ़ भूकम्प परिवर्तन की सेना के क्रूर सैनिक हैं। परिवर्तन के भय से जगत का हृदय निरन्तर कम्पित होता है। मनुष्य परिश्रमपूर्वक धन उत्पन्न करता है, पर परिवर्तन ओलों की वर्षा से उन फसलों को नष्ट कर देता है–

''तुम नृशंस–नृप स` जगती पर चढ़ अनियन्त्रित,
करते हो संसृति को उत्पीड़ित, पद–मदिर्त,
नग्न नगर कर, भग्न भवन, प्रतिमाएँ खण्डित,
हर लेते हो विभव, कला, कौशल, चिरसंचित
आधि, व्याधि, बहु–वृष्टि, वात, उत्पात, अमंगल,
बह्नि, बाढ़, भूकम्प–तुम्हारे विपुल सैन्य–दल।''[6]

काल की क्रूर भ्रकुटि परिवर्तन का परिहास। परिवर्तन से ही विश्व का अश्रुपूर्ण इतिहास लिखा गया है। शक्तिशाली परिवर्तन के एक इशारे से आलीशान भवन धराशायी हो जाते हैं, पर्वत की चोटियाँ खण्डित होकर गिरने लगती हैं–

''काल का अकरूण–भकृ ुटि विलास
तुम्हारा ही इतिहास
एक कठोर–कटाक्ष तुम्हारा अखिल–प्रलयंकर
समर छेड़ देता निसर्ग–संसृति में निर्भर
भूमि चूम जाते अभ्र–ध्वज–सौध, श्रृंगवर
नष्ट–भ्रष्ट साम्राज्य–भूति के मेघाडम्बर।''[7]

इस कविता में मनुष्य के जीवन से लिए गए विभिन्न प्रतीक चित्रों में यह सिद्ध किया गया है कि इस नश्वर संसार में सुख और शान्ति क्षणिक हैं। सुख का संसार क्षण में नष्ट हो जाता है। प्रातः काल की माँ बनने वाली स्त्री की गादे क्षणभर में सूनी हो जाती है। जिनकी अभी–अभी शादी हुई है उनमें से कोई एक संसार से कूच कर जाता है और दूसरे का सौभाग्य लुट जाता है–

''प्रातः ही तो कहलाई मात, पथोधर बने उरोज उदार
मधुर उर–इच्छा को अज्ञात, प्रथम ही मिला मृदुल–आकार
छिन गया हाय! गोद का बाल, गड़ी है बिना बाल की नाल!
अभी तो मुकुट बँधा था माँथ, हुए कल ही हल्दी के हाथ
खुले भी न थे लाज के बोल, रिवल`भी चुम्बन शून्य कपोल

Copyright ⓒ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

हाय! रुक गया वही संसार, बना सिन्दूर अँगार।''[8]

इसी नश्वरता पर कवि चिरकाल से विचार करता आ रहा है। दूसरे और तीसरे खण्ड में संसार की नश्वरता और परिवर्तनशीलता के वर्णन के बाद चौथे खण्ड में 'संसार में सब कुछ दुखमय' है इसकी ओर संकेत है। जिसमें गरीबी और अमीरी के, शोषण और विलास के, विपन्नता और यातना के चित्र हैं। मानवता घायल है। बहुत से लोगों के पास पहनने के लिए वस्त्र नहीं है। कड़कती सर्दी में उनका शरीर काँपता रहता है। शोषक गरीबों को लूटने में लगा है। मनुष्य क्रूर, हिंसक और रक्तपिपासु हो गया है। प्रत्येक सुबह नई लीला लकेर उपस्थित होती है। शान्ति व सुख कहीं ओर है। संसार में हिंसा शेष, क्रूरता, संहार, युद्ध, शोषण का साम्राज्य है। जो भी वैभव, विलास और सौन्दर्य हमें दिखाई देता है वह शोषण पर आधारित है–

''कोटि मनुजों के, निहव अकाल, नयन मणियों से जटित कराल
अरे, दिग्गज–सिंहासन जाल, अखिल मृत–देशों के कंकाल
मोतियों के तारक–लड़–हार, आँसुओं के श्रृंगार।''[9]

पाँचवे खण्ड में संसार की नश्वरता और दुखमयता के कारण उत्पन्न निराशा और अवसाद से उबरने का प्रयत्न है। कवि का भ्रम दूर हो जाता है। वह समझ जाता है कि ब्रह्म नित्य व जगत अनित्य है। जिस प्रकार सागर में तरंगें उत्पन्न होती है, तिरोहित होती हैं, उसी प्रकार ब्रह्म की इच्छा से ही जगत का निर्माण हेाता है। सम्पूर्ण सृष्टि में एक ही सत्ता सर्वत्र विद्यमान है। सुख व दुख, सवेरा व रात्रि उसी सत्ता के दो छोर हैं–

''एक ही छवि के असंख्य उड्गन, एक ही सब में स्पन्दन
एक छवि के बिभात में लीन, एक विधि के आधीन।''[10]

इस विश्व में एक व्यापक उल्लास ही जो विविध रूपों में अभिव्यक्त होता है, वही प्रत्येक हृदय में प्रेम का रूप धारण करता है–

''वही उर में प्रमोच्छवास, काव्य में रस, कुसुमों में वास,
अथल–तारक–पलकों में हास, लोल लहरों मं लास।
विविध–दृव्यों में विविध प्रकार, एक ही मर्म–मधुर झंकार।''[11]

इसीलिए संसार और परिवर्तन पर्यायवाची हैं। एक नित्य तत्त्व में से सृष्टि जन्म लेती है फिर विनष्ट होकर उसी में समा जती है। वस्तुतः एक ही मूलतत्त्व है जो विविध नाम और रूपों में अभिव्यक्त होता है। इस विविधता का कारण है कर्म और कर्म की मूल प्रेरणा है–कामना। निसन्देह दुख किसी को नहीं चाहिए किन्तु दुख के अभाव में सुख व्यर्थ हैं। सुख हमें इसलिए आकर्षक लगते हैं क्योंकि दिन–रात दुख झेलने के उपरान्त ही सुख सरस प्रतीत होते हैं। यदि दुख न हों तो सुख की कोई उपयोगिता नहीं है। आँसुओं के बिना तो जीवन बोझ बन जाएगा। वस्तुतः पंत के इस दर्शन में विभिन्न भारतीय और अभारतीय दार्शनिक सिद्धान्तों की झलक दिखाई देती है–

''तरसते हैं हम आठों याम, इसी से सुख अति–सरस, प्रकाम,

Copyright ⓒ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

झेलत` निशि–दिन का संग्राम, इसी से जय अभिराम।
''बिना दुख के सब सुख निसार, बिना आँसू के जीवन भार,
दीन दुर्बल है रे संसार, इसी से दया क्षमा और प्यार।''[12]

इस कविता के अन्त में कवि ने परिवर्तन को सर्वशक्तिमान मान लिया है। संसार में जो कुछ है, जैसा कुछ है वह सब परिवर्तन है। परिवर्तन नवजीवन का वरदान है, विश्व रूप सृष्टि का कर्ता है। माया मय परिवर्तन एक और अनेक, व्यक्ति व समष्टि के बीच अदृश्य रूप में घूमता है। परिवर्तन वह महासागर है, जिसमें शत–शत लोक के समान उठते और विलीन होते रहते है–

''अहें महाम्बुधि लहरों–से शत लोक, चराचर,
क्रीड़ा करते सतत तुम्हारे स्फीतवक्ष पर,
तुंग–तरंगों से शत युग शत शत कल्पान्तर
उगल, महोदर में विलीन करते तुम सत्वर,
शत–सहस्त्र–रवि–शशि, असंख्य ग्रह, उपग्रह, उडगण
जलते हैं, बुझते हैं स्फुलिगं–से तुम में तल्क्षण,
अचिर विश्व मं` अखिल–दिशावधि, कर्म, वचन, मन
तुम्हीं चिरन्तन, अहे विवर्तन–हीन विवर्तन।''

इस कविता के स्पष्टतः दो भाग हैं एक आत्मगत संवेदना–प्रेम, विरह और विषाद का चित्रण करने वाला दूसरा परिवर्तन के विराट बिम्ब को प्रस्तुत करने वाला। इन दोनों भागों में एकसूत्रता बनाए रखने में परिचित छायावादी शैली ही सहायक बनी है। दुख, विरह, निराशा, अवसाद की मनोदशा का परिवर्तनकारी शक्तियों के सन्दर्भ में उदात्तीकरण किया गया है। उसे मानवतावादी आशाओं, आकांक्षाओं से सम्बद्ध कर दिया गया है। छायावादी शैली और चिन्तन की स्पष्ट छाप इस कविता पर है इस कविता में प्रकृति कोमल–कठोर, भयानक, विनाशकारी, दार्शनिक आदि सभी रूपों में रूपायित हुई है।

डॉ. राजरानी शर्मा
एसोसिएट प्रोफ़ेसर
सत्यवती महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय ईमेल
आई.डी.– rajrani@satyawati.du.ac.in

Copyright ⓒ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-5 No. 2 January–December 2020

- लम्बी कविताओं का रचना विधान, पृष्ठ–29, संपादक डॉ. नरेन्द्र मोहन
- वही
- हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ–701–702, काशी नागरी प्रदारिणी सभा, द्वितीय संस्करण सम्वत् 1999
- चार दिन सुखद चाँदनी रात, फिर अंधकार अज्ञात, पृष्ठ–114
- परिवर्तन कविता–पृष्ठ–116, पल्लव काव्य संकलन, सुमित्रानन्दन पंत, इंडियन प्रैस लिमिटेड, प्रयाग, 1926

- वही, पृष्ठ–117
- वही, पृष्ठ–118
- वही, पृष्ठ–120
- वही, पृष्ठ–122
- वही, पृष्ठ–124
- वही, पृष्ठ–126, 127
- वही, पृष्ठ–131

Copyright ⓒ 2020 Authors